महर्षि पिप्लाद और छह जिज्ञासु

व्याख्या: शृङ्गी मुनि कृष्ण दत्त जी महाराज

मेरे प्यारे! ऋषिवर! मुझे स्मरण आता रहता है, तप की वार्त्ता, तप क्या है? मुनिवरों! देखो, तप मानव का विचार है, मानव का आहार और व्यवहार है, क्योंकि जब आचार्य तपता है, तो देखो, आहार और व्यवहार से तपा करता है, परन्तु हमारे यहाँ परम्परा यह कहती है, हमारे यहाँ गुरु और शिष्य का संवाद यह कहता है, आचार्य जनों के उदगारों में आता है, कि यहाँ तप करने के लिए कहा है। बेटा! एक समय मुझे स्मरण है, जब महर्षि पिप्लाद मुनि के आश्रम में देखो, यह रेवक इत्यादि जब छह जिज्ञासु आचार्य के गृह में पंहुचे, मुनिवरों! देखो, उस समय जिज्ञासुओं ने कहा प्रभु! आपकी शरण में आए हैं, उन्होंने कहा क्या शरण, क्या चाहते हो?

सुकेशा च भारद्वाजः शैब्यश्च सत्यकामः सौर्यायणी च गार्ग्यः कौसल्यश्चाश्वलायनो भार्गवो वैदर्भिः कबन्धी कात्यायनस्ते हैते ब्रह्मपरा ब्रह्मनिष्ठाः परं ब्रह्मान्वेषमाणा एष ह वै तत्सर्वं वक्ष्यतीति ते ह समित्पाणयो भगवन्तं पिप्पलादमुपसन्नाः॥ प्रश्नोपनिषद १.१

पदार्थः (सुकेशा) यह नाम है (च) और। (भारद्वाजः) भारद्वाज ऋषि की सन्तान में। (शैव्यः) की सन्तान में सदा होने वाली। (सत्यकामः) सत्य का नाम है। (सौर्य्यायर्णी) सूर्य की सन्तान में से। (च) और। (गार्ग्यः) गर्ग ऋषि की सन्तान। (कौशल्याः) कौशला नाम। (च) और। (आश्वलायनः) आश्वल ऋषि का पुत्र। (भार्गवः) भार्गव ऋषि की सन्तान में। (वैदर्भिः) वैदर्भि के पुत्र। (कात्यायनः) कत ऋषि का बेटा। (कबन्धी) कबन्धी नाम। (तेह) यह प्रसिद्ध तप करने वाले। (एते) यह पुरुष। (ब्रह्मपराः) ब्रह्म के भक्त। (ब्रह्मनिष्ठाः) ब्रह्म की प्राप्ति में लगे

हुए। (परम्) इन्द्रियों से परे। (ब्रह्मा) सर्वव्यापक परमात्मा को। (अन्वेषमाणाः) खोज करते हुए। (एष) यह प्रसिद्ध ब्रह्मज्ञानी गुरु। (वै) निश्चयपूर्वक। (तत्सर्वम्) सबके भीतर रहने वाले आत्मा के उपदेश को प्राप्त करने के विचार से। (वक्ष्यति इति) उपदेश के योग्य समझकर। (समित्पाणयो) हाथ में अग्निहोत्र की समिधा लिये हुए। (ते) यह ऋषि लोग। (भगवन्त) पूजने योग्य आचार्य। (पिप्लादम्) पिप्पलाद नामी ऋषि के पास उपदेश सुनने को। (उपसन्नाः) पधारे।

व्याख्या: शृङ्गी मुनि कृष्ण दत्त जी महाराज

उन्होंने कहा प्रभु! हम ऋत को जानना चाहते हैं, ऋत किसे कहते हैं, उस समय बेटा! महर्षि पिप्पलाद जी ने कहा कि अच्छा, आप सब देखो, यह हमारे आश्रम का नियम है, यह चार सौ गऊ है, इनका एक वर्ष तक इनका लालन पालन करो। उसके पश्चात, तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर दिया जा सकेगा, उस काल में जब कि मैं जानता हूँगा तो। मुनिवरों! देखो, वह जिज्ञासुओं ने, ब्रह्मजिज्ञासुओं ने एक वर्ष तक बेटा! नियम धारण किया, कि हम गऊओं का पालन करेंगे। बेटा! गऊओं का लालन पालन करते थे, जब पालन करते रहे, एक वर्ष हो गया लालन पालन करते हुए, एक वर्ष के पश्चात पिप्पलाद मुनि के चरणों में ओत प्रोत हो गएं, और चरणों में ओत प्रोत हो करके, उन्होंने कहा कि भगवन! अब हम यह जानना चाहते हैं कि ऋत किसे कहते हैं, ऋत को जानने के लिए, आपकी शरण में आएं हैं। उन्होंने कहा बहुत सुन्दर, क्या तुम यही जानना चाहते हो, उन्होंने कहा कि हाँ, महाराज! क्या जिस स्थिति से तुमने, एक वर्ष तक गऊंओं का पालन किया, उसी को हमारे यहाँ ऋत कहते हैं।

तान्ह स ऋषिरुवाच भूय एव तपसा ब्रह्मचर्येण श्रद्धया संवत्सरं संवत्स्यथ यथाकामं प्रश्नान्पृच्छत यदि विज्ञास्यामः सर्वं ह वो वक्ष्याम इति॥ प्रश्नोपनिषद १.२

पदार्थः (तान्) उनको। (ऋषिरुवाच) ऋषि ने कहा। (भूय एव) तुम दो बार। (तपसा) तप करते हुए। (ब्रह्मचर्येण) ब्रह्मचारी होकर। (श्रद्धया) श्रद्धा से। (संवत्सरं) एक वर्ष तक। (संवत्स्यथ) मेरे समीप रहो, फिर (यथाकामम्) यथा

कामना। (प्रश्नान्) प्रश्नों को। (पृच्छत) पूछो। (यदि)। (विज्ञास्यामः) मैं जानता होऊँगा। (सर्वेह) तो सभी तुहारे लिए। (वक्ष्यामः) कहूँगा अर्थात् उपदेश करूँगा।

अथ कबन्धी कात्यायन उपेत्य पप्रच्छ भगवन्कुतो ह वा इमाः प्रजाः प्रजायन्त इति ॥ प्रश्नोपनिषद १.३

पदार्थः एक वर्ष बीत जाने के पश्चात् (कबन्धी) कबन्धी नाम। (कात्यायन) जो कत ऋषि के कुल में उत्पन्न हुआ था। (उपेत्य) पिप्पलादि ऋषि के समीप आकार (पप्रच्छा) पूछता था। (भगवन्) हे गुरु महाराज। (कुतः) कहाँ से या किससे। (ह वा) पूर्व सृष्टि की उत्पत्ति को ध्यान पूर्वक कहिये। (इमाः) यह जो प्रत्यक्ष दीखता है। (प्रजाः) मनुष्य पशु आदि जीव जन्तु और निर्जीव। (प्रजायन्त) उत्पन्न हुए हैं।

व्याख्याः श्रृङ्गी मुनि कृष्ण दत्त जी महाराज

ऋत की परिभाषा

उन्होंने कहा बहुत सुन्दर, क्या तुम यही जानना चाहते हो, उन्होंने कहा कि हाँ, महाराज! क्या जिस स्थिति से तुमने, एक वर्ष तक गऊओं का पालन किया, उसी को हमारे यहाँ ऋत कहते हैं।

सत्य के तीन प्रकार तो मेरे प्यारे! ऋषिवर! कितना संक्षिप्त उत्तर है ऋषि का, ऋषि ने कहा जिस प्रतिभा से, जिस श्रद्धा से, जिस आस्था से, जिस तरंगों से तुमने गऊओ का पालन किया है, संयम से रहे हो, उसी को ऋत कहा जाता है। आज हम ऋत को जानना चाहते हैं, बेटा! ऋत नाम है, तपस्या का, क्योंकि तपस्या एक रूपों में ऋत का स्वरूप धारण कर लेती है।

तपस्या

तो मेरे प्यारे! ऋषिवर! आज का हमारा यह वाक क्या कहता चला जा रहा है, मैं कोई अधिक वाक उच्चारण करने नहीं आया हूँ, केवल यह वाक उच्चारण करने के लिए आ पंहुचे हैं कि हमारा जीवन वास्तव में तपना चाहिए बेटा! जब यह संसार तपता है, तपने के पश्चात ही संसार में कोई वस्तु आती है।

आओ, मेरे प्यारे! ऋषिवर! सूर्य की नाना किरणें तपा करती हैं, समुद्र को तपाती हैं, बेटा! समुद्र से जब जलों का उत्थान होता है, जल से मेघ बनते हैं, मेघ बेटा! देखो, उससे जलों की उत्तम वर्षा होती है, वृष्टि होती है उससे बेटा! देखो, समुद्रों में एक महानता की ज्योति जाग्रत हो जाती है, बेटा! उसी से जीवन उन्नत बना करता है, उसी से मानो जीवन में रस आता है। आनन्दतव आता है, तो हमें विचारना है, कि यह सर्वत्र वस्तु तपा करती है। तो मेरे प्यारे! ऋषिवर! मानव का जीवन भी तपमय होना चाहिए।

तो मेरे प्यारे! ऋषिवर! संसार में प्रत्येक वस्तु तप चाहती है, इसीलिए तपना चाहिए। ब्रह्मचारी कुल में बेटा! जब शिक्षालय में ब्रह्मचारी तपते हैं बेटा! अपने ब्रह्मचर्य से तपा करते हैं, तपने का अभिप्राय क्या है, ब्रह्मचारी कौन होता है? जो बेटा! ब्रह्मविद्या में चरता है, ब्रह्मविद्या को चरी करने वाला जैसे पशु मानो पशु पृथ्वी में से नाना प्रकार की वनस्पतियों को चरता है, देखो, चरता है इसी प्रकार जब ब्रह्मचारी ब्रह्म को चरता है, ब्रह्म किसे कहते हैं, विद्या को चरता है बेटा! उसको चरने के पश्चात वह ब्रह्मचारी उसी काल में चरता है, जब ब्रह्मचर्यतव उसके समीप होता, उसका जीवन उस महानता में तपा हुआ होता है बेटा! तो मेरे प्यारे! ऋषिवर! आज का हमारा वाक क्या कहा रहा है, कि तपना चाहिए। तप उसे कहते हैं, जहाँ मान अपमान नहीं होता, जहाँ गुरु की शरण में रहा जाता है और गुरु कैसा तपा हुआ, क्या, गुरु उसे अपने गर्भ में धारण कर लेता है बेटा! कहा है, क्या गुरु जब उसे अपने आङ्गन में धारण कर लेता है, अहा! उसको शिक्षार्थी बना देता है, उज्ज्वल बना देता है, और कहता है चक्षुम्मे शुन्धामि, प्राणम्मे शुन्धमि, श्रोत्रम्मे शुन्धामि हे बालक! हे ब्रह्मचारी! तू अपनी इन्द्रियों को मुझे अर्पित कर मानो उन्हें में चक्षुम्मे शुन्धामि, मैं तेरे चक्षुओं को सुन्दर बना रहा हूँ। इनका शोधन कर रहा हूँ, देखो, आचार्य सबसे प्रथम जो कह देता है, ब्रह्मचारी! अब तू अपने गुरु के आङ्गन में आ गया। तू तप, तू अपनी इन्द्रियों को तपा, इन्द्रियों को तपाना है ज्ञान से, विवेक से, मानो उनमें विडम्बना नहीं आनी चाहिए। इनमें तप होना चाहिए।

सत्य के तीन प्रकार

तो मेरे प्यारे! ऋषिवर! कितना संक्षिप्त उत्तर है ऋषि का, ऋषि ने कहा जिस प्रतिभा से, जिस श्रद्धा से, जिस आस्था से, जिस तरंगों से तुमने गऊओ का पालन किया है, संयम से रहे हो, उसी को ऋत कहा जाता है। आज हम ऋत

को जानना चाहते हैं, बेटा! ऋत नाम है, तपस्या का, क्योंकि तपस्या एक रूपों में ऋत का स्वरूप धारण कर लेती है। तो मेरे प्यारे! ऋषिवर जब हम ऋत का वर्णन करते हैं। कि इससे यह संसार क्रियात्मक हो रहा है, उसी को ऋत कहा जाता है, और ऋत और सत मानो देखो, द्वितीय शब्द सत्यता में परणित होता है, बेटा! देखो, सत्य में भी देखो, तीन प्रकार के सत्य का विवेचन देखो, हमारे यहाँ आता है, देखो, एक तो अभाव में सत्य है, एक सत्य सत है, एक ब्रह्म सत है, मानो देखो, एक तो वह, जो प्रकृति हमें प्रतीत हो रही है, सत है। परन्तु इसका अभाव भी होता है, परन्तु इतना नहीं होता, यह सदैव सत रहती है। परन्तु एक अभाव में सत है, एक मेरे प्यारे! महानन्द जी! मुझे दृष्टिपात आ रहे हैं, परन्तु कुछ समय के पश्चात जब यह परमाणु रूप हो जाता है। अहा! देखो, इसी स्वरूप का, इसी सत का अभाव हो जाता है। एक माता का पुत्र हमें प्रतीत होता है, परन्तु माता प्रतीत हो रही है, शिष्य गुरु को प्रतीत हो रहा है, परन्तु शिष्य के नेत्रों के समीप गुरु जन है, परन्तु गुरु जनों का अभाव है, क्यों अभाव है? क्योंकि उसका जो स्थूल शरीर है, वह नहीं रहेगा, परमाणुवाद बन जाएगा, इसीलिए देखो, वह जो स्वरूप हमें प्रतीत हो रहा था, वह सत था। परन्तु सत के आङ्गन में सत नही अभाव प्रतीत होता है, एक ब्रह्म सदैव सत्य रहता है मानो देखो, जो ब्रह्म सत है, अहा! ब्रह्म सत है वो सदैव उसका किसी काल में भी अभाव नहीं होता।

तस्मै स होवाच प्रजाकामो वै प्रजापतिः स तपोऽतप्यत स तपस्तप्त्वा स मिथुनमुत्पादयते रयिं च प्राणं चेत्येतौ मे बहुधा प्रजाः करिष्यत इति ॥ प्रश्नोपनिषद १.४

पदार्थः (तस्मै) उस कात्यायन। (सह) वह पिप्पलाद ऋषि। (उवाच) स्पष्ट कहने लगे। (वै) जब (प्रजाकामः) प्रजा के अर्थ से (प्रजापतिः) सब जीवों का नित्य

राजा, जो परमात्मा है। (सः) उसने। (तपः) क्रिया देनेवाली शक्ति से। (अतप्यत्) क्रिया अर्थात् गति दी। (सः) उसने। (तपस्तप्त्वा) क्रियाशील के। (मिथुनम्) दो प्रकार की जोड़ी को। (उत्पादयत्) उत्पन्न किया। (रयिश्च) एक तो भोगने योग्य जड़ से। (प्राणश्च) दूसरा भोगनेवाला। (इत्यत) यह दोनों भोगने योग्य और भोगने वाले। (मे) मेरे। (बहुधा) बहुत प्रकार की। (प्रजाः) जीवों के शरीर को। (करिष्यत्) करेंगे। (इति) समाप्ति का शद।